‘जैन आगम साहित्य में वर्णित दास–प्रथा

डॉ. इन्द्रेश चन्द्रसिंह

प्राचीन भारत में दास-प्रथा प्रागैतिहासिक काल से ही प्रचलित मानी जाती है [१] यद्यपि कतिपय विदेशी इतिहासकारों ने भारत यात्रा के दौरान यहाँ जो कुछ देखा, उसके आधार पर भारत में दास-प्रथा के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि इसका प्रमुख कारण यह था कि भारत में दास-प्रथा समकालीन सभ्य देशों जैसे-रोम, यूनान और अमेरिका आदि की भाँति नहीं थी। उक्त सभ्य देशों में दासों के साथ क्रूरतम व्यवहार किया जाता था। इसके विपरीत भारत में दास एवं दासियाँ परिवार के सदस्यों के साथ रहते थे तथा परिवार के अंग समझे जाते थे। जैनागम आचारांगसूत्र में गृहपति, उसकी पत्नी, बहन, पुत्र, पुत्री एवं पुत्रवधू के साथ दास-दासी तथा नौकरों (सेवकों) को भी पारिवारिक सदस्यों के अन्तर्गत ही वर्णित किया गया है।[२] पश्चिमी सभ्य कहे जाने वाले देशों में दासों की स्थिति से भारतीय दासों की उत्कृष्टता को प्रमाणित करने के लिए यहाँ राजा द्वारा इन्हें देवानुप्रिय जैसे शब्द का सम्बोधन पर्याप्त होगा।[३] सामान्यतया दास परिवार में रहते हुए समस्त आन्तरिक एवं बाह्य कार्यों में अपने स्वामी का सहयोग करते थे।[४]

दासों की स्थिति– जैनाचार्यों ने दासों की गणना दस बाह्य परिग्रहों में करते हुए श्रमणों के लिए इनका प्रयोग निषिद्ध बताया है। इसके विपरीत चार गृहस्थों के लिए इन्हें सुख का कारण बताया गया है तथा इनकी गणना भोग्य वस्तुओं के साथ की गई है।[५] जैनागम काल में राजा एवं कुलीन व्यक्ति ही दासों के स्वामी नहीं होते थे अपितु धनसम्पन्न गाथापति एवं गृहस्थ भी अपने यहाँ दासों को नियुक्त कर उनसे सहयोग प्राप्त करते थे।[६] सामान्यतया सेवावृत्तिही दासों का प्रधान धर्म था। अत: उनकी स्थिति को शोचनीय मानते हुए वर्णित है कि महावीर के उपदेश में जिस प्रकार पापदृष्टि वाला कुशिष्य हितानुशासन से शासित होने पर अपने को हिन समझता है, उसी प्रकार दास कों भी हीन समझा जाता था।[७] दासों के ऊपर दासपतियों को पूर्ण आधिपत्य प्राप्त था। अत: विवाह आदि अवसरों पर विविध वस्त्राभूषणों के साथ प्रीतिदान के अन्तर्गत इन्हें भी सम्मिलित कर लिया जाता था।[८] इस प्रकार प्रीतिदान अथवा भेंट के रूप में दिये जाने पर दासों को श्वसुर पक्ष के अन्य सदस्यों के साथ गिना जाता था।[९]

दासता के कारण: जैन आगम साहित्य में दास विषयक उल्लेखों के आधार पर दासों के प्रकार अथवा दासवृत्ति अपनाने के पीधे कार्यरत कुछ प्रमुख हेतुओं को विवेचित किया जा सकता है। स्थानांगसूत्र[१०] में ६: प्रकार के दासों का उल्लेख किया गया है। इसमें जन्म से ही दासवृत्ति स्वीकार करने वाले, क्रीत (खरीदे) किये हुए दास, ऋणग्रस्तता से बने हुए दास, दुर्भिक्षग्रस्त होने पर, जुर्माने आदि को चुकता न करने पर तथा कर्ज न अदा करने के कारण बने दास उल्लेखनीय हैं।

जन्मदास:– दास एवं दासी के साथ उसकी सन्तति पर भी दासपति के अधिकारों का प्रमाण मिलता है। अत: यह कहा जा सकता है कि दासियों द्वारा पुत्र-प्रसव के उपरान्त उसपर स्वामी का स्वत: अधिकार स्थापित हो जाता था। स्वामी की देख-रेख में बाल्यावस्था से ही इनका पालन-पोषण किया जाता था।[११] प्रारम्भिक अवस्था में ये स्वामी-पुत्रों का मनोरंजन करते तथा उन्हें क्रीडा कराते थे। कभी-कभी अपने स्वामी को भोजन आदि भी पँहुचाते थे।[१२] तथा बडें होने पर अन्य गुरुतर कार्यों को सम्पादित करते थे।

क्रीतदास–जैनागमों में कुछ ऐसे भी विवरण मिलते हैं जहाँ राजपुरुषों द्वारा अपने कार्यों में सहयोग हेतु विविध देशों से लाये गये दास-दासियों को नियुक्त किया गया था। इनमें दासों (पुरुषों)

---

१ स्लेवरी इन एशियेष्ट इण्डिया, पृ. १५-१८, २ आचारांग सूत्र, २/१/३३७ पृ. २५, ३. ज्ञाताधर्मकथासू, १/१/२६, राजप्रश्नीयसूत्र, विवेचन, पृ. १७, ४. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, १/३/१६, ५. उत्तराध्ययनसूत्र, ३/१७, प्रश्नव्याकरणसूत्र, अ. २, पृ. १६०. ६. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, २/१/१०, ७. उत्तराध्ययनसूत्र, १/३९, ८. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, १/१६/१२८, ९. आचारांगसूत्र, २/१/३५०., १०. स्थानांगसूत्र, ४/१९१ - अ तथा देखिए - जे.सी. जैन, पृ. १५७, ११. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, १/२/४३, १२ वही, १/२/३३

की अपेक्षा दासियों का उल्लेख अपेक्षाकृत अधिक हुआ है। विदेशी दासियों में चिलातिका (चिलात-किरात देशोत्पन्न), वर्वरी (वर्वरदेशोत्पन्न), वकुश देश की तथा योनक, पल्हविक, ईसनिक, लकुस, द्रविण, सिंहल, अरब, पुलिंद, पक्कण, बहल, भुरुंड, शबर, पारस आदि का नामोंल्लेख हुआ है।[१३] ये दासियां अपने-अपने देश के वेश धारण करने वाली, इंगित, चिन्तित, प्रार्थित आदि में निपुण, कुशल एवं प्रशिक्षित होती थी। इन तरुण दासियों को वर्षधरों (नपुंसक), कंचुकियों एवं महत्तरकों (अन्त:पुर के कार्य की चिन्ता रखने वाले) के साथ राजपुत्रों के लालन-पालन हेतु नियुक्त किया जाता था।[१४] विदेश से मँगवाई गयी दासियों[१५] का विवरण उस समय समाज में दासों के क्रय-विक्रय का संकेत प्रस्तुत करता है, जिसकी पुष्टि केश-वाणिज्य के अन्तर्गत दास-दासियों की खरीद-फरोख्त (पशुओं के समान) किये जाने से होती है।

युद्धदास:- युद्ध में विजयी पक्ष, पराजित राज्य की विविध धन-सम्पदा के साथ साथ मनुष्यों एवं स्त्रियों को भी बन्दी बना लेता था। इनमें से कुछ अतिविशिष्ट स्त्रियों को तो धन-सम्पन्न व्यक्तिओं द्वारा पत्नी के रूप में ग्रहण कर लिया जाता था। जबकि शेष पुरुषों एवं स्त्रियों को दासवृत्ति स्वीकार करने के लिए संत्रस्त किया जाता था।[१६] सम्भवत: अपने उपयोग से अधिक संख्या होने पर इन्हें उपहार या परिश्रमिक के रुप में भी दिया जाता था।[१७]

दुर्भिक्षदास एवं ऋणदास- दुर्भिक्ष के समय उदरपूर्ति एवं अन्य आवश्यकता हेतू लिये गये ऋणो की समय पर अदायगी न किये जाने से ऋणी को ऋणदाता को अल्पकालिक अथवा जीवनपर्यंत दासता स्वीकार करनी पडती थी। उस समय वणिक अथवा गाथापति लोगों को आवश्यतानुरूप कर्ज वितरित करते थे। परिस्थितवश यदि निर्धारित अवधि में ऋण लेने वाला व्यक्ति उसका सम्यक् भुगतान करने में असमर्थ रहता था तो उससे कहा जाता था कि या तो तुम कर्ज चुकाओ, अन्यथा गुलामी करों।[१८]

धात्रियाँ-दास तथा दासियों के अतिरिक्त उस समय प्राय: सम्पन्न परिवारों में नवजात शिशुओं के पालन, संरक्षण, संवर्ध्दन एवं विकास हेतु दाइयों की नियुक्ति की जाती थी। जैन सूत्रों में राजपरिवार में विविध देशों से लाइ गयी दासियाँ जिन्हें कार्यानुसार पांच कोटियों में विभक्त किया गया है। (१) क्षीरधात्री, (२) मंडनधात्री, (३) भज्ञनधात्री, (४) अंवधात्री एवं (५) क्रीडापनधात्री। ये दाइयाँ बचे को दूध पिलाने, वस्त्रालंकारों से सज्जित करने, स्नान कराने गोद में लेकर बचे को खिलाने तथा क्रीडा आदि कराने में संलग्न रहती थी।[२०] दाइयों की स्थिति दासियों की अपेक्षा श्रेष्ठ थी। इसका कारण यह था कि दाइयों का स्वामीपुत्रों अथवा पुत्रियों से न केवल तब तक सम्बन्ध रहता था, जब तक वे नादान रहते थे बल्कि वे उनका उचित मार्गदर्शन वयस्क हो जाने पर भी करती थी।[२१] राजपुत्रों के प्रव्रजित होते समय माता के साथ दाइयों के भी जाने का उल्लेख मिलता है। दाइ (अम्माधाई) राजपुत्र के वामपार्श्व में रथारुढ़ होती थी।-[२२]

दासों के कार्य- जैनागम ग्रन्थों में परिवार में रहते हुए घर के काम-काज में तत्पर दासों का विवरण मिलता है। घर के आन्तरिक कार्यों में इनसे अत्यधिक सहयोग प्राप्त किया जाता था। दास तथा दासियाँ परिवार में प्राय: राख तथा गोबर आदि फेंकने, सफाई करने, साफ किये गये स्थल पर पानी छिड़कने, पैर धुलाने, स्नान कराने, अनाज, कूटने, पीसने, झाडने और दलनें तथा भोजन बनाने में अपने स्वामी अथवा स्वामिनी का सहयोग करते थे।[२३] जैसाकि पीछे कहा जा चुका है कि दास एवं दासियों के अतिरिक्त उनकी सन्तति पर भी दासपतियों का प्राय: आधिपत्य रहता था। दासचेट अपने मालिक के बचों का मनोरंजन तथा क्रीडादिं कराते थे एवं स्वामी को भोजन आदि पँहुचाते थे।[२४] दासचेटियाँ अपने स्वामिनी के साथ पूजा-सामग्री

१३. अन्तकृतदशांगसूत्र ३/२, राजप्रश्नीयसूत्र २८१, १४. वही, वही, १५. व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र, २/८/५, उत्तराध्ययन, ८/१८, १६. अन्तकृतदशा, ३/३ १७. पिण्डनिर्युक्ति, ३१७-१९, व्यवहारभाष्य, ४/२, २०६-७, १८. देखिए, जे.सी. जैन, पृ. १५७-१५९, १९. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, १/१/९६, अन्तकृतदशा, ३/२ २०. ज्ञाता धर्म कथासूत्र, १/१/९६, २१. वही, १/१/१४६, २२. वही, १/७/२०, २३. वही, १/२/२२, २४. वही, १/४८/४५

लेकर मन्दिरों में जाती थी।[२५] दासों की नियुक्ति कभी-कभी अंगरक्षकों के रूप में भी होती थी तथा सेवा शूश्रूषा करने के लिए दासियों की नियुक्ति अंगपरिचारिका के रुप में होती थी। इस प्रकार की दासी को आभ्यान्तर दासी कहा जाता था। ये अपने मालकिन के चिन्तित होने पर उसका कारण खोजतीं, तत्पश्चात् स्वामी से उसका निवेदन कर निराकरण हेतु प्रार्थना करती थी।[२६] दास-दासियाँ कभी-कभी सन्देशवाहक अथवा दूत के रुप में भी प्रयुक्त किये जाते थे और अपने स्वामी के गोपनीय कार्यों का सम्पादन करते थे। अत: इन्हें प्रेष्य कहा जाता था।[२७]

दास-दासियों के विशिष्ट कार्य- कतिपय दासियाँ राजकन्याओं के साथ स्वयंवर में भी जाती थीं। उनमें कुछ दासियाँ लिखने का कार्य करती थीं[२८] तथा कुदेख दर्पण लेकर उपस्थित जनसमूह के प्रतिबिम्ब को दिखलाकर तत्सम्बन्धित गुण-दोष का बरवान करती थी।[२८] इसके अतिरिक्त उस काल में रूप एवं सौन्दर्यं सम्पन्न दासियों (तरुणी दासी) की उपस्थिति स्वामी पुत्रों के अति निकट रहती थी।[२९]

दासों का जीवन- यद्यपि भगवान् महावीर के अहिंसा महाव्रत के समर्थक एवं बहुसंख्यक सहृदय दासपति, दासों को अपने पारिवारिक सदस्यों के साथ नियुक्त कर उनका सम्यक् पालन-पोषण कर उदारता का प्रदर्शन करते थे तथा उन्हें 'देवानुप्रिय' जैसे शब्दों से सम्बोधित करते थे। उपासकदशांगसूत्र में अहिंसाव्रत के अतिचारों के अन्तर्गत दासों को बांधने, जान से मारने, बहुत अधिक बोझ लादने तथा अत्यधिक श्रम लेने जैसे अनाचारों को भी सम्मिलित किया गया है।[३०] लेकिन कभी-कभी दासों द्वारा विवेकहीन कर्मों का निष्पादन करने पर स्वामी द्वारा इन्हें प्रताड़ित किया जाता था।[३१] कतिपय क्रूर दासपतियों द्वारा दासों को अकारण ही प्रताडित किया जाता था तथा उनको सामर्थ्य से परे कार्यों में लगाकर पीडा पहुचाई जाती थी।[३२] जनसामान्य अपनी आवश्यकतानुसार परिवार में दासों की नियुक्ति करते थे तथा उनके भरण-पोषण का ध्यान भी रखते थे। इस सबके बाव-जूद दासों की गणना भोग्य वस्तुओं[३३] में करकें उनकी स्वतंत्रता को बाधित कर दिया जाता था। जैनागमों के काल में दास-दासियों का क्रय-विक्रय, उपहार एवं पारिश्रमिक के रूप में दिया जाना तथा उन्हें प्रताडित करना एवं जीवनपर्यन्त पराधीनता अदि तथ्य उनकी शोचनीय सामाजार्थिक स्थिति की ओर बरबस ध्यान आकृष्ट कराते है।

दासपन से मुक्ति- जैन ग्रन्थों में कुछ ऐसे भी सन्दर्भ प्राप्त होते हैं, जहाँ दासों द्वारा दिये गये शुभसन्देश से खुश होकर दासपति उन्हें दासवृत्ति से मुक्ति प्रदान कर देते थें। ऐसी स्थिति में दास-दासियों का मधुर वचनों से तथा विपुल पुष्पों, गंधो, मालाओं और आभूषणों से सत्कार-सम्मान करके इस तरह की आजीविका की व्यवस्था कर दी जाती थी कि जो उनके पुत्र-पौत्रादि तक चलती रहे।[३४] दासों को मुक्त करते समय उनका मस्तकधोत[३५] (मस्तक धोना) करना दासता से मुक्ति का प्राथमिक एवं महत्त्व पूर्ण लक्षण माना जाता था। इसके अतिरिक्त वह व्यक्ति जो दुर्भिक्ष अथवा अन्य अवसर पर महाजनों से ऋण लेता था तथा समय पर ऋण न देने पर दासत्व स्वीकार करता था। ऐसी स्थिति में उस ऋणी व्यक्ति द्वारा साहूकार का कर्ज चुकता कर देने पर दासपन से मुक्ति सम्भव थी।[३६] सामान्यतया दासों को जीवनपर्यन्त स्वतंन्त्र होने का आधिकार एवं अवसर बहुत कम था। सामान्यत: दासपति अपने यहाँ नियुक्त दासों का पालन-पोषण पारिवारिक सदस्य की तरह करते थे।

---

२५. अन्तकृतदशासूत्र ३/२-६, ज्ञाताधर्मकथा १/१/४९, २६. ज्ञाताधर्मकथा, १/२/४३, २७. वही, १/१६/१२२, २८. वही, १/१/१४७-४८ तथा देखिए बुद्धकालीन समाज और धर्म, पृ. ३१-३२, २९. उपासकदशासूत्र, अ. १, सू. ४५, ३०. ज्ञाताधर्मकथासूत्र १/१८/८, ३१. आवश्यकचूर्णि पृ. ३३२, देखिए, जे.सी. जैन, पृ. १६१, ३२. अन्तकृतदशासूत्र, ३/२-६, ३३. वही, ८/१५, ३४. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, १/१/८९, ३५. व्यवहारभाष्य ४/२, २०६-७, ३६. देखिए, जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज, पृ. १५८-५९